वर्तमान समस्याएँ

और

लोक की भूमिका

संपादक

डॉ. प्रमोद कुमार श्रीवास्तव 'अनंग'

आयोजन सचिव

स्वामी सहजानंद स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजीपुर (उ.प्र.) www.sspgc.in

पोद्दार पब्लिकेशन

तारानगर कालोनी, छित्तूपुर, बी.एच.यू.

वाराणसी-221005

प्रकाशक
पोद्दार पब्लिकेशन
तारानगर कालोनी, छित्तूपुर, बी.एच.यू.
वाराणसी-221005

ISBN : 978-81-938416-2-4

©संपादक

प्रथम संस्करण : 2018
वॉल्यूम- प्रथम

मूल्य : 575/-

भारत में प्रकाशित

सांस्कृतिक समन्वय की विराट चेष्टा : भक्तिकालीन काव्य

(भारतीय संस्कृति के सूत्र और भक्तिकालीन काव्य के सन्दर्भ में)

डॉ. शशिकला जायसवाल

विभागाध्यक्ष हिन्दी, राजकीय महिला पी0जी0 कालेज, गाजीपुर।

हिन्दी का भक्तिकालीन काव्य सर्वधर्मसमभाव, साम्प्रदायिक सद्भाव, सामाजिक समरसता, सार्वभौम भावात्मक एकता जैसे सांस्कृतिक तत्वों से सराबोर है। भक्तिकालीन काव्य की मूलसंवेदना साम्प्रदायिक समभाव और सांस्कृतिक सहबोध का द्योतक है। परमसत्ता के स्वरूप तथा साधना पद्धतियों की विविधता के बावजूद भक्तिकालीन कवियों ने धर्म समाज में समरसता तथा समानता के अनुकरणीय आदर्शो के आचरण के लिए मानव समाज को अनुप्रेरित किया। इन भक्त कवियों ने एक ऐसे समाज की परिकल्पना को साकार किया जहाँ बाह्याडंबर, कर्मकाण्ड, अनैतिकता, अहम्, अलगाववाद, अनुदारता और अर्थ–लोलुपता जैसे सांस्कृतिक चेतना के बाधक तत्व भाग खड़े होने के लिए विवश हो गए। कबीर का यह कथन इस प्रसंग में अनुकरणीय और समचीन है।

"कथनी मीठी खांड़ सी, करनी विष की लोय।
कथनी तज करनी करे, सब विषय, अमृत होय।।"

हिन्दी साहित्य के पूर्व मध्य युग को भक्तिकाल नाम से अभिहित किया जाता है। हिन्दी काव्य का श्रेष्ठतम अंश इसी काल की देन है। इस काल की रचनाओं में लोकोन्मुखी प्रवृत्ति सर्वाधिक पायी जाती है। वस्तुतः भक्ति आन्दोलन एक वैचारिक आन्दोलन था जिसके द्वारा भारतीय सांस्कृतिकता की रक्षा का बीड़ा उठाया गया। यह आन्दोलन पूर्णतः भारतीय था, जिस पर सूफी सन्तों का पर्याप्त प्रभाव पड़ा। इस विषय पर कि भक्ति आन्दोलन के उद्भव के वास्तविक कारण क्या थे, विद्वानों के बीच पर्याप्त विमर्श का विषय रहा है। हिन्दी साहित्य के दो सर्वमान्य विद्वान आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के द्वारा दिये गये मन्तव्य को समन्वित कर लेने से समस्या का समाधान हो जाता है। भले ही, भक्ति आन्दोलन हताश भारतीय मानस की निराशा का परिणाम न था, और नही उसका जन्म इस्लाम के आक्रमण के क्रोड़ से हुआ हो परन्तु इसके उदय के कारणों में इस्लामी कट्रवाद से रक्षा की हिन्दुत्व भावना अवश्य रही है। भक्ति काव्य के पीछे बौद्ध धर्म का लोकमूलक रूप है और प्राकृतों की श्रृंगारकाव्य की प्रतिक्रिया है तो इस्लाम के सांस्कृतिक आंतक से बचाव की सजग चेष्ट भी है। डॉ0 रामविलास शर्मा के अनुसार "भक्ति–आन्दोलन अविरल भारतीय है, देश और काल की दृष्टि से ऐसा व्यापक सांस्कृतिक आन्दोलन संसार में दूसरा नहीं है।"[1]

हिन्दी साहित्य का भक्तिकालीन भारतीय समाज और संस्कृति संक्रमण के दौर से गुजर रही थी। इस समय भारत की जनता सामाजिक और सांस्कृतिक दोनों ही स्तरों पर अनेक बुराईयों और संकटों से ग्रस्त थी। जनता किकर्तव्यविमूढ और भ्रमित थी। चारो ओर शोषण और भय का कुचक्र व्याप्त था। मुक्तिबोध लिखते हैं–" समूचे भक्ति आन्दोलन के मूल में जनता के दुख–दर्द ही है और उन दुःख दर्दो को बड़ी जीवंत मानवीयता के साथ उभारने, उनसे एकमेल होकर सामने आने में ही भक्ति आन्दोलन की शक्ति को देखा जा सकता है।"[2] हिन्दी साहित्य के इतिहास में भक्तिकाल साहित्य, समाज और सस्कृति की दृष्टि से अविस्मरणीय, कालातीत और महत्वपूर्ण रहा है। इस युग में सामाजिक, सांस्कृतिक और साहित्यक तीनों क्षेत्र में जो परिवर्तन दिखाई देते हैं वे अपने आप में क्रान्तिकारी है। प्रेमशंकर के अनुसार " भारतीय मध्यकाल में एक साथ कई संसार देखे जा सकते हैं और इनसे मिलकर उस समय का सामाजिक सांस्कृतिक वृत्त पूरा होता है।"[3]

सांस्कृतिक चिन्तन और कलात्मक सृजन एक ऐसी प्रक्रिया है जो मनुष्य के व्यक्तित्व और उसके जीवन को अप्रत्यक्ष रूप से समृद्ध बनाती है। इस संस्कृति के अन्तर्गत प्रमुख तत्वों, विभिन्न शास्त्रों का

है। सांस्कृतिक एकता और समन्वय के माध्यम से वैश्विक संस्कृतियों को समान धरातल पर स्थापित करते हुए जायसी कहते हैं :–

"छार उठाई लीन्ह एक मूठी। दीन्हि उड़ाई पिरिथमी झूठी।।"

सम्पूर्ण भक्तिकालिन काव्य इस प्रकार के उद्धरणों से भरा पड़ा है। आज आवश्यकता है वर्तमान भारतीय एवं वैश्विक परिप्रेक्ष्य में उन्हें, प्रचारित और आत्मसात करने की, जिससे कि उनके द्वारा किए सद्प्रयास केवल इतिहास की वस्तु बनकर न रह जाये। भक्त कवियों की वाणी मनुष्यता के दुःख दर्द से द्रवीभूत होकर मुखरित हुई है। वर्तमान समय में धर्म की विनाशकारी शक्तियाँ एक बार पुनः सदियों से अर्जित किये गये हमारे उन्नत सामाजिक, सांस्कृतिक मूल्यों को नष्ट–भ्रष्ट करने पर आमादा है। धर्म को संकरी और संकीर्ण गलियों में ढकेला जा रहा है। भक्त कवियों की यह विरासत हमारे लिए पथप्रदर्शक होने के साथ–साथ हथियार भी है जिसके द्वारा हम सामाजिक और सांस्कृतिक विघटनकारी शक्तियों से लोहा ले सकते हैं।

निष्कर्षतः हम उपर्युक्त तथ्यों को देखते हुए कह सकते हैं कि सांस्कृतिक समन्वय की विशाल भावभूमि का सृजन करने वाला यह भक्तिकाल पुनः एक बार भारतीय जनमानस को उद्वेलित करने की मांग कर रहा है। भक्तिकालीन साहित्य, सर्वकालिक और सार्वभौम साहित्य है। बाल–विमर्श, स्त्री–विमर्श, और दलित विमर्श की दृष्टि से देखा जाय तो भी इसके बीज रूप भक्तिकाल में मिलते है। तुलसी सूर का काव्य बाल विमर्श और स्त्री विमर्श की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। तो मीरा का काव्य स्त्री विमर्श की पूरी कहानी मनुष्यता के धरातल पर उतर कर कहता है। कबीर, दादू, रैदास आदि संतकवियों की वाणी दलित विमर्श के स्वर को पूरी चैतन्यता और सजगता के साथ प्रस्तुत करता है। भक्तिकाल, इस्लामिक संस्कृत के साथ जैन, बौद्ध, वैष्णव संस्कृतियों के योग से बने भारतीय संस्कृति के सामंजस्य को अक्षुण्ण बनाये रखने में अपनी महती भूमिका निभाते हैं। अपनी वैचारिक समृद्धि के द्वारा भक्तकवि भारतीय लोकमानस की नस–नस में भारतीयता का बोध प्रवाहित करने में सफल रहे। यह मानने में रंचमात्र भी संकोच नहीं होना चाहिए कि भक्ति कालीन काव्य की सामाजिक और सांस्कृतिक उपलब्धियाँ हिन्दी साहित्य के इतिहास में अनूठी है। यह भारतीय साहित्य परम्परा का एक कालातीत और कालजयी काव्य है जो अपने समय में जितना लोकधर्मी और महत्वपूर्ण था उतना ही वर्तमान में भी अर्थवान एवं ग्रहणीय है, जिसको हमें कृतज्ञता के साथ स्वीकार करना और संरक्षित करना है।

संदर्भ :

1 परम्परा का मूल्यांकनः रामविलास शर्मा :राजकमल प्रकाशन नई दिल्लीः 2011 पृ0 90
2 नयी कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबन्धः ग0मा0 मुक्तिबोधः विश्वभारती प्र0 नागपुर : 1977 पृ0 92
3 भक्ति काव्य का समाज दर्शन प्रेमशंकरः वाणी प्रकाशन नई दिल्लीः 200 पृ0 44
4 सूरदास : मुंशीराम शर्माः राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्लीः 2002 पृ0 214
5 संस्कृति के चार अध्यायः रामधारी सिंह दिनकर : लोकभारती प्रकाशन इलाहाबादः 2010 पृ0 17
6 भक्ति आन्दोन और भक्ति काव्य : शिवकुमार मिश्र : लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद 2010 पृ0 288
7 परम्परा का मूल्यांकन : रामविलाश शर्मा राजकमल प्रकाशन नई दिल्लीः 2011 पृ0 92
8 भक्ति काव्य के साक्षात्कार : डॉ0 कृष्ण दत्त पालिवाल : भारतीय ज्ञान पीठ नई दिल्ली : 2007, पृ0 319